अँधेरे

जयशंकर

अँधेरे

जुलाई की दुपहर की घड़ियाँ थीं और अन्नी खिड़की के पास खड़ी गिरती बारिश को देख रही थी। पुरानी और सँकरी सड़क पर बारिश की बूँदें उतरतीं ओर देखते-देखते

https://www.hindiadda.com/andhere/

कहीं गुम जातीं। पुराने मकानों की छतों पर गिरती बूँदों से एक खास किस्म का स्वर निकलता और बिजली के तारों पर बूँदें थमती-गिरती रहतीं। इसी तरह की, एकदम इसी तरह की बारिश को अन्नी ने इसी खिड़की से अपने बचपन के दिनों में भी देखा था। आदमी से बाहर, उसके परिवेश और प्रकृति में कितने कम बदलाव आते हैं किंतु उसके परिवेश और प्रकृति में कितने कम बदलाव आते हैं किंतु उसके अपने अंदर कितना कुछ बदल जाता है। शायद आदमी के भीतर की दुनिया उसकी बाहर की दुनिया से कुछ ज्यादा टूटती-बिखरती होगी। तभी बचपन की बारिश और जवानी की बारिश भले ही किसी आदमी को एक-सी महसूस होती हो पर उसको देखती निगाहें बदल जाती हैं।

दूसरे कमरे में फोन की घंटी बनजे लगी।

'क्या बस लेट थी?' बाबा फोन पर पूछ रहे थे।

'हाँ, अन्नी ने झूठ बोला।

'घर में सब ठीकठाक है...?'

'राधाबाई ने सब व्यवस्था कर दी है।'

'और तुम्हारा खाना...'

'मैंने बस में ही खा लिया था।' उसने दुबारा झूठ बोला।

'बारिश के रुकते ही यहाँ आ जाती।'

'ठीक है।'

'हम लोग तुम्हारा रास्ता देख रहे हैं।'

'मैं शाम तक आ जाऊँगी।'

उसने अपनी इस भूल को महसूस किया कि उसे फोन पर अपनी छोटी माँ और जिया से बात करनी थी। उसका मन बेचैन बना। उसकी अपने लिए शिकायत और शर्म बढ़ती गई। पिछले छह बरसों में पूना से वह बीच-बीच में आती रही थी और इसी मकान में रुकती रही थी। तब बाबा और छोटी माँ यहीं रह रहे थे, लेकिन हाल ही में वे लोग नए फ्लैट में चले गए थे। अन्नी ने सोचा था कि पूना में बीते पिछले कुछ दिनों

की व्याकुलता के साथ उसका कुछ दिनों तक अकेले रहना ही ठीक रहेगा और पुराने मकान में यह संभव हो सकेगा। छोटी माँ और बाबा को उसका यहाँ आना और रहना ठीक नहीं लगा था। लेकिन बाबा ने इस मकान की मरम्मत और साफ-सफाई के लिए छुट्टियाँ ली थी और छोटी माँ ने इन सबके लिए जरूरी पैसों के लिए कर्ज लिया था। बाबा को यह भी समझ आ गया था कि सत्रह-अठारह बरस की जो लड़की अपनी माँ की मृत्यु के बाद पढ़ाई के लिए पूना गई थी वही लड़की छह बरस बाद अपने शहर नहीं लौटी है। अन्नी बड़ी हो गई थी। शांत और गंभीर रहने लगी थी। पहले से कम बोलने लगी थी और वह भी धीरे-धीरे, सँभल-सँभलकर। उसके बाबा के मन में यह ख्याल भी आया था कि क्या अन्नी ने उनके दूसरे विवाह को अच्छी तरह स्वीकार किया है या नहीं?

अपनी बिटिया के लिए मकान को ठीक-ठाक करने के लिए उसके पिता ने छुट्टियाँ ली थी। वह गर्मियों के आखिरी दिन थे और स्कूल का सत्र शुरू ही हुआ था। घर की मरम्मत, साफ-सफाई और पुताई होती रही थी और वे बरामदे में कुर्सी डाले हुए काम की निगरानी करते रहे, पुराने परिचितों से बतियाते रहे और रोमाँ रोलाँ का उपन्यास 'ज्याँ क्रिस्तोफ' पढ़ते रहे थे। इस घर की उनकी अपनी खट्टी-मीठी यादें थीं। यहीं उनके माँ-बाप मरे थे। यहीं उनकी बिटिया जन्मी थी। इसी घर में उनकी पहली पत्नी का देहांत हुआ था। मौत के वक्त अन्नी की माँ की उम्र अड़तीस थी। वह क्लास में अपने छात्रों को भूगोल पढ़ा रही थीं और तभी उनके सीने में तेज दर्द उठा था। उनके घर आने के कुछ क्षणों के बाद ही न उनका दर्द रहा और न वह खुद।

अन्नी ग्यारहवीं की परीक्षा की तैयारी कर रही थी। उसके बाबा बीमार होते चले गए। उस पूरे साल में अन्नी की जिम्मेवारियाँ बढ़ती गई थीं। घर सँभालते हुए उसे बारहवीं की परीक्षा देनी थी और स्कूल भी दूर था। माँ के पाले हुए कुत्ते, तोते और उनके लगाए गए छोटे से बाग का भी ध्यान रखना पड़ता था। जैसे-तैसे माँ को गुजरे हुए एक साल बीत गया और तभी अन्नी ने शहर से बाहर पूना में अपनी मौसी के यहाँ रहकर अपनी पढ़ाई करने का फैसला लिया था। इस फैसले की वजह शायद उसके पिता का अपनी ही स्कूल की एक अध्यापिका से दूसरा विवाह होना भी था जो गर्मियों के लिए तय हुआ था। अपने बाबा के दूसरे विवाह के दो महीने बाद अन्नी पूना चली गई और वहीं अपनी मौसी के मकान की बरसाती में रहने लगी। उसकी मौसी के पति भी सेना में थे और कश्मीर में आतंकवादी हमले में मारे गए थे। मौसी सेना के ही एक स्कूल में पढ़ा रही थी और सत्रह-अठारह की उम्र के अपने दो बच्चों को पाल रही थी।

एक पराए घर में अन्नी के शुरुआत के दिन कुछ-कुछ मुश्किल और मनहूस बने रहे। अपने घर और इलाके का छूटना उसे सताता रहा। नई जगह और नए कॉलेज में अपनी कमजोर अंग्रेजी और कमजोर आँखों की परेशानियाँ भी बढ़ी हुई जान पड़ीं। बाबा के दूसरे विवाह ने भी कहीं न कहीं अन्नी के अपने संशय और संताप को बढ़ाया ही था। पर उन दिनों में बाबा और छोटी माँ इतने दूर से भी उसका बराबर ख्याल रखते रहे। उसकी छोटी-छोटी जरूरतों और दिक्कतों को समझते रहे। बाबा और छोटी माँ की चिट्ठियाँ लगातार आती रहीं। मौसी ने भी उसका ख्याल रखने में जरा-सी भी कसर नहीं छोड़ी और धीरे-धीरे अन्नी के दिन, बेहतर, सहनीय और आत्मीय होते गए। मौसी के अलावा घर में उसका हमउम्र कजिन था और उससे कुछ छोटी बहन, जो मैट्रिक की तैयारी कर रही थी।

शुरू के दिनों में मौसी की माँ की चाल से, माँ के चेहरे से समानता का सामना अन्नी को माँ की कुछ ज्यादा ही याद दिलाता रहा था। वह बरसाती के अपने कमरे में रोती रही थी। मौसी उसे जंगले के पास खड़े हुए पुकारती... और बरबस ही उसे माँ का पुकारा जाना पकड़ने लगता। पर धीरे-धीरे मौसी भी माँ की तरह ममतामयी होती चली गई थीं और अन्नी को उनका सान्निध्य भाने लगा था, छूने लगा था।

फोन की घंटी दुबारा बज उठी। उधर के रिसीवर पर छोटी माँ थी। उसकी छोटी बहन जिया भी फोन के पास कुछ-कुछ कह रही थी।

'तुम थक गई होगी?'

'यहाँ आराम कर लिया है।'

'भूख तो लगी होगी?'

'मैंने ग्यारह बजे ही खाया था।'

'मैं तुम्हारे लिये टिफिन भेज रही हूँ... बारिश थमते ही बाबा के साथ यहाँ आ जाना... जिया तुम्हें देखने के लिए तरस रही है... बड़ी मुश्किल से खाना खाया है... तुम्हारे साथ खाने की जिद पर अड़ी थी...।'

'तुम स्कूल नहीं गई?'

'हम दोनों ने ही छुट्टी ले रखी थी... तेज बारिश नहीं होती तो हम बस अड्डे आ जाते। इधर तुम्हारे बाबा की सरदी जरा-सी भी नहीं भाती है।'

'मैं जल्दी ही निकलती हूँ...।'

जिया का तरसना, उन दोनों का छुट्टियों पर रहना और बाबा की तबियत का जिक्र, कुछ ऐसी बातें रहीं कि अन्नी को अपने यहाँ उतरने का ख्याल पर पछतावा होने लगा। वह बस अड्डे से सीधे बाबा के पास जा सकती थी। बाबा की यही उम्मीद रही होगी। छोटी माँ ने फ्लैट के एक कमरे में एक मेज पर अन्नी की पुरानी किताबों को जमाया है, वहीं अमृता शेरगिल के उस चित्र को भी टाँगा है जिसे उसकी माँ ने अपने कमरे में टाँग रखा था और जिस चित्र को अन्नी बचपन से ही पसंद करती आई थी।

इस घर में आने, अपनी पुरानी चीजों और जगहों के साथ रहने के पीछे अगर अन्नी के साथ पिछले दिनों में बीता कुछ था तो यह भी कि अपनी इधर की मनःस्थितियों के साथ वह कुछ दिनों तक बाबा और छोटी माँ के साथ ज्यादा न रहे। इससे उन्हें लगता कि वह उनके साथ होने से इस तरह बुझी-सी है और ऐसा होने के कारणों को वह उनके साथ साझा नहीं कर सकती थी। वह खुद उन बातों को समझना चाह रही थी जिन्हें पिछले दिनों में उसने देखा था, सहा था, समझना चाहा था। इस मकान का खाली-खाली-सा होना, एक कोने में माँ की सिंगर मशीन का खड़ा रहना, जूट के बैग में रखी हुई उनकी सलाइयों और अधबने स्वेटर के छोटे से हिस्से का बाहर होना, माँ के दिनों का छोटा-सा पूजाघर और रसोई की पीली दीवारों पर खड़ा बारिश का अँधेरा कुछ उन चीजों में आ रहा था जिनसे पिछले चार घंटों से अन्नी को तसल्ली मिलती रही थी।

पूना में कैंप एरिया के जिस बस स्टाप से अन्नी कॉलेज के लिए बस पकड़ती थी वहीं फूलों और गुलदस्तों की दुकान थी। वह वहाँ खड़ी रहती और वहाँ से आती फूलों की गंध कभी-कभार उसे उन चुनिंदा शामों में ले जाती जब वह अपने माँ-बाप के साथ शास्त्रीय संगीत की महफिलों में शामिल हुआ करती थी... और माँ की वेणी से आती गंध उसे सम्मोहित किए रहती थी। ऐसी यादों के बीच से गुजरते हुए वह यह भी सोचा करती थी कि अगर उसकी माँ जीवित रहती तो उसका अपना जीवन वैसा नहीं होता जैसा वह अब है, जैसा वह हमेशा रहेगा।

पराए परिवार और शहर के शुरुआती दिनों को छोड़ दिया जाए तो अन्नी का अपना जीवन ठीकठाक ढंग से ही बीत रहा था। कॉलेज दूर था और वह बस से आना-जाना करती थी। उसके विषय भी नए थे और वह पहले की तरह माँ-बाबा से अपनी पढ़ाई के लिए मदद भी नहीं ले सकती थी। सारा दिन पढ़ने में और सुबह कुछ अपनी तैयारी में कुछ घर के छोटे-छोटे कामों में गुजर जाती थी। छुट्टी का दिन आता तो वह अपनी

बरसाती की साफ-सफाई करती, अपने सप्ताह भर के कपड़ों, परदों, चादरों और बैगों को धोती। बिस्तरों को धूप में डालती। किताबों पर से धूल झाड़ती। अपने और मौसी के कपड़ों को इस्त्री करती और यह सब करते हुए ट्रांजिस्टर सुनती रहती। उसी दिन उसे बाबा को उनके पत्रों का जवाब भी लिखना होता और उसी दिन वह कैंप एरिया के पुराने बगीचे में मौसी के साथ शाम की सैर पर जाती रही थी।

जून के आखिरी दिनों में उसका एम.ए. का नतीजा कुछ बेहतर ही निकला और वह वहीं रहते हुए रिसर्च करने, पार्ट टाइम नौकरी करने का मन बना रही थी। तभी उसके साथ कुछ इस तरह का घटने लगा कि उसने सोचा कि अगर उसे पूना में रहना भी है तो मौसी के घर में नहीं। पर वह कहाँ रहेगी? क्या बाबा इसके लिए तैयार होंगे? वह मौसी को उनके यहाँ न रहने का कारण किस तरह बता पाएगी? क्या बाबा इसके लिए तैयार होंगे? वह मौसी को उनके यहाँ न रहने का कारण किस तरह बता पाएगी? संशय की इन घड़ियों में पहली बार उसके मन में, अपने शहर में, अपने घर में कुछ लंबे समय के लिए लौटने का ख्याल आया था। पिछले बरसों में वह गर्मियों की छुट्टियों में थोड़ा-बहुत समय अपने बाबा के साथ गुजारती ही रही थी।

'मैं कुछ दिनों के लिए घर जाना चाहती हूँ।'

'इंटरव्यू के बाद चली जाना,' मौसी ने कहा था।

'तब तक आ जाऊँगी।'

'तुम पिछले महीने तो हो आई थी।'

'बाबा की याद आ रही है।'

'सच कह रही हो?'

'तुमसे झूठ नहीं बोल सकती,' उसने झूठ बोला था।

'ठीक है... अरुण से रिजर्वेशन के लिए कह देना।'

'मैं लाइब्रेरी जा ही रही हूँ... वहीं से रिजर्वेशन के लिए चली जाऊँगी।'

'कब जाना चाहोगी?'

'तीन-चार दिनों में... बाबा को फोन पर बता दूँगी।'

वह पिछले दस-बारह दिनों से इस पशोपेश में रहती आई थी कि क्या मौसी को उसे अरुण की हरकतों के बारे में सब कुछ सच-सच बताना ठीक होगा? इससे अरुण कितना ज्यादा लज्जित होगा? मौसी को इससे कितना कष्ट मिलेगा? फिर घर में जवान होती दूसरी लड़की भी है। अरुण के मासूम और जवानी की दहलीज पर खड़े चेहरे का ख्याल भी था कि अन्नी ने पिछले दिनों की वारदातों को अपने तक ही रखने, किसी से भी न कहने का फैसला लिया था। अन्नी में यह था। वह अपने फैसले खुद करती रही थी और उसके अच्छे-बुरे नतीजों को सहने के लिए अपने मन को तैयार करती रही थी।

फिर अन्नी के लिए यह बताना कठिन भी था कि अरुण कितनी बेहूदा किस्म की तस्वीरों का एलबम उसके कमरे में रख गया था और वे पत्रिकाएँ कितनी घटिया किस्म की थीं जिसे अरुण ने उसकी मेज पर रख छोड़ा था। इधर वह उसको छूने-छेड़ने की कोशिशें भी करने लगा था और उसकी देह को, उसकी देह के उभारों को ताकता रहता था। एक दोपहर तो हद ही हो गई। वह मकान में अकेली थी। उसने नहाते हुए महसूस किया कि कोई बाथरूम की खिड़की के पास खड़ा है। वह जैसे-तैसे अपनी बरसाती के अंदर घुसी थी और कुछ देर बाद ही उसके दरवाजे पर दस्तक होने लगी थी। अरुण दरवाजा खुलवाना चाह रहा था। दरवाजा खुलवाने के लिए गिड़गिड़ा रहा था। उस रात वह भय और शर्म से सो ही नहीं पाई थी। जिंदगी में पहली बार अपने औरत होने का ख्याल इतनी शिद्दत के साथ अन्नी के करीब खड़ा रहा। क्या किसी की देह के लिए हमारी आकांक्षा, रिश्तों की मर्यादा और मार्मिकता को भी भूल सकती है? क्या अरुण जैसा सीधा-सादा, संवेदनशील लड़का भी देह के दबाव में इस तरह आ सकता है? उस रात जागते हुए वह यह निश्चित नहीं कर पाई कि अरुण का ऐसा व्यवहार उसके दिल-दिमाग की उपज है या सिर्फ देह के अपने दुख-दर्द के बारे में इतना ज्यादा सोचा भी नहीं था और वह देह के उस दर्द को ही जानती रही थी जो देह से ही रिसता है, दिल और दिमाग से नहीं। कहीं उसके मन में यह बात भी आती-जाती रही थी कि उसे गंभीरता और गहराई के साथ अपने मौसेरे भाई अरुण की बेताबी और बेचैनी को समझने की कोशिशें करनी चाहिए।

अन्नी को बस स्टैंड पर छोड़ने के लिए मौसी और अरुण ही आए थे। मौसी को जल्दी जाना पड़ा और अरुण ही बस निकलने तक बस की खिड़की के पास खड़ा रहा था। अरुण ने ही उसके लिए वहाँ के स्टाल से एक अंग्रेजी फिल्मी पत्रिका खरीदी थी जिसके कवर पर एक अधनंगी लड़की खड़ी थी।

'मुझसे बस में पढ़ा नहीं जाता।'

'इनमें पढ़ने के लिए रहता ही क्या है... बस पन्ने पलट लेना।'

'मैं लौटकर देख लूँगी... तब तक तुम पढ़ लेना।'

पत्रिका लौटाते हुए उसने महसूस किया था कि इतने बरसों में भी उसके मौसेरे भाई को उसकी रुचियों का हल्का-सा भी आभास नहीं मिला था। वह खुद ही अपने कजिन के बारे में क्या जानती थी? उसने इस किस्म की फूहड़ हरकतें न की होतीं तो अन्नी के मन में उसे लेकर ऐसे सवाल और संशय जन्म ही नहीं लेते। एक ही छत के नीचे रह रहे लोग भी एक-दूसरे को लेकर कितने उदासीन बने रहते हैं। अन्नी ने शुरुआत से ही कोशिश की होती तो शायद वह अरुण से बात कर सकती थी, अरुण को समझा सकती थी। इस मकाम पर ऐसा करना न संभव था और न ही सरल।

'बारिश के बाद हम माथेरान जाएँगे,' अरुण ने कहा।

'माथेरान नहीं, पंचगनी ठीक रहेगा।' अन्नी ने कहा।

दोनों हँसने लगे थे। यह उनके बीच चलनेवाला पुराना मजाक था। पिछले छह बरसों में ये लोग कहीं घूमने जाने की बातें करते रहे थे लेकिन एक बार भी कहीं के लिए निकल नहीं पाए थे। जाने की बात के बीच-बीच में किसी न किसी के द्वारा दुहराए जाने और वहाँ कभी भी नहीं जा सकने, से यह बात उनके लिए एक किस्म के घरेलू ठिठोली में बदल गई थी।

अन्नी अपने बचपन के घर की खिड़की से न थमती हुई बारिश को देख रही थी। शाम होने को आ रही थी और बारिश धीमी जरूर हो चुकी थी लेकिन रुक नहीं रही थी। बाबा को फोन करने के लिए अन्नी बीच में कमरे में गई।

'बाबा तुम एक ऑटो लेकर आ जाओ... मैं ऑटो स्टैंड तक भी गई तो भीग जाऊँगी।'

'ठीक है... मैं निकलता हूँ।'

'क्या तुम्हारे खाने के लिए कुछ लाना है?'

'इसकी जरूरत नहीं है... तुम आओगे और हम निकल जाएँगे।'

अन्नी ने कैंप एरिया से अपने बाबा, छोटी माँ, छोटी बहन और राधाबाई के लिए खरीदी गई चीजों को एक बैग में रखना शुरू किया। बहन के लिए कुछ खिलौने और किताबें थीं। छोटी माँ के लिए हैंडलूम की दो साड़ियाँ और बाबा के लिए एटलस। उसने

घर के लिए नीबू का अचार और जेली की एक बड़ी बोतल भी साथ रख ली थी और राधाबाई के लिए चौसर के खेल का सामान, जिसके लिए वह बार-बार कहती रही थी। उसने लकड़ी के कुछ प्रयोगशील खिलौने उस संस्थान से खरीदे थे जो बच्चों की शिक्षा के क्षेत्र में काफी काम कर रहा था। उसकी बहन पाँच साल की हो रही थी और इसी सत्र में उसका स्कूल जाना शुरू हो रहा था। अन्नी ने भी इसी उम्र में भारतीय विद्या भवन में दाखिला लिया था और तभी बाबा ने उसकी माँ ने भी स्कूटर चलाना सीख लिया था। पर वह स्कूटर पर बैठे हुए सड़क पर कभी नहीं निकलीं। बाबा उनकी इस बात को याद करते हैं।

'मुझे मरने से नहीं एक्सीडेंट से मरने से डर लगता है,' माँ कहती थी।

'और जो इतने लोग सड़कों पर गाड़ियों में निकलते हैं,'बाबा ताना देते।

'मैं सिर्फ अपना जानती हूँ... दूसरों के बारे में मैं न जानती हूँ और न कुछ कहना चाहती हूँ।' माँ कहा करती।

अन्नी ने भी माँ को इस आदत को नोट किया था। वह दूसरों के मामलों में दिलचस्पी नहीं लेती थीं। किसी के बारे में कुछ भी बुरा बोलना, किसी भी बात में बिना सोचे-समझे शामिल होना उसे अच्छा नहीं लगता था। उसकी माँ का यह अंश अन्नी के भीतर भी पलता-पकता रहा था। अन्नी को भी किसी मसले पर निर्णय देना, दूसरों की शिकायतें करना भाता नहीं था। और शायद यही कारण था कि अरुण की हरकतों से बेचैनी महसूस करते हुए भी उसको लेकर अन्नी के मन में कोई ठोस-सी मान्यता बन नहीं पाई थी। पिछले दो महीनों से वह उसकी छोटी-छोटी हरकतों को नजरअंदाज करने की कोशिशें करती रही थी और उसके बाथरूम के पास खड़े होने की दोपहर के बाद की सुबह अन्नी ने उससे कहा था, 'यह सब ठीक नहीं है।'

'तुम बहुत डरपोक लड़की हो।'

'यही समझ लो... मेरे साथ यह सब दुबारा नहीं करना।'

'अगर किया तो।'

'मैं यहाँ से चली जाऊँगी।'

'कहाँ?'

'कहीं भी... क्या मेरा अपना घर नहीं है।'

'तुम्हारी छोटी माँ का घर।'

'वहाँ भी जा सकती हूँ।'

'तुम कहीं नहीं जा सकती।'

'तुम मुझे बहुत जानते हो?'

'पाँच साल से तुम यहाँ रह रही हो।'

तभी मौसी छत पर तौलिया डालने के लिए आई थी। अन्नी ने महसूस किया था कि अरुण के भीतर कोई बात, कोई ख्याल, कोई तनाव गहराता जा रहा है। अपने इस हमउम्र मौसेरे भाई के अड़ियलपन और निर्लज्जता का गहराता अहसास भी था कि अन्नी को उसी वक्त अपने बचपन के मकान का बरामदा, उसकी लाल दीवारों, छोटी माँ के साँवले और सुंदर चेहरे की याद ने घेरना शुरू कर दिया। उसे लगा कि उसकी मौसी का घर उसका अपना घर नहीं है। उसने यह भी सोचा की आदमी में ऐसा कोई आवेग भी पैदा हो सकता है जो किसी बात का, किसी मर्यादा या मूल्य का ध्यान रखना नहीं जानता है? यह आदमी के आदिम आवेग का मामला था और अन्नी इसके बारे में शायद ही कुछ जानती थी, समझती थी।

अन्नी अपनी छोटी बहन के साथ थी। बाबा उसके लिए सैरीडॉन लेने फार्मेसी गए थे और छोटी माँ उसके लिए नाश्ता तैयार कर रही थी।

'दीदी यहाँ कितने दिन रहोगी?'

'थोड़ी देर में चली जाऊँगी... तुम चलोगी?'

'अभी नहीं... बाहर कितना अँधेरा है।'

'तुम्हें अँधेरे से डर लगता है?'

'मैं अँधेरे से खूब डरती हूँ।'

अपनी छोटी बहन के डर को सुनते हुए अन्नी सोच रही थी कि इस घर से बाहर ऐसे कितने ही अँधेरे इलाके खड़े हैं जिन्हें जिया धीरे-धीरे जान पाएगी, जिनके साथ धीरे-धीरे रहना सीख जाएगी। कभी उसे भी अँधेरे से ही डर लगता था...। सिर्फ अँधेरे से डर लगता था और बिजली गुल होते ही वह माँ से लिपट जाया करती थी। माँ-बाबा

के पास न होने से रोने-चीखने लगती थी। फिर एक दिन माँ नहीं रही और उसने माँ के न रहने के बाद के अँधेरे को जाना था, जिया था। वह उसके जीवन का सबसे गाढ़ा, सबसे भयावह अँधेरा रहा था। फिर छोटी माँ, उसे पूना जाना पड़ा पराई छत पर दिन-रात बिताने पड़े, माँ के बिना सब उजड़ा-उजड़ा-सा लगता ही रहा था, अब बाबा भी कहीं दूर थे और अँधेरा होने पर वह किसी को भी पुकार नहीं सकती थी, किसी से भी लिपट नहीं सकती थी। उसकी जिंदगी में तरह-तरह के अँधेरे उतरने लगे थे और वह उन अँधेरे इलाकों को पहचानना शुरू कर रही थी।

बाहर धीरे-धीरे गिरती बारिश थी और कहीं अँधियारा, कहीं उजाला। अपनी छोटी बहन की तुतलाहट, मुस्कान और रसोई से बाहर आती छोटी माँ की आवाज, रसोई में तैयार होते पकौड़े की गंध, अन्नी को उन दिनों से दूर करते जा रही थी जो उसने पिछले दिनों पूना की अपनी छत पर बिताए थे। उसकी छोटी बहन चौसर बिछा रही थी, कौड़ियों को फेंक रही थी, गोटियों को इधर-उधर बिना समझे रख रही थी और पड़ोस में सोफे पर बैठी अन्नी मुस्करा रही थी, खुश हो रही थी। तभी खिड़की के करीब से गुजरती ट्रेन के उजाले की लंबी-सी लकीर नजर आई थी और बाबा का चेहरा भी, जो देहरी पर खड़ा हुआ अपनी दोनों बेटियों की तरफ देख रहा था, मुस्करा रहा था। छोटी माँ रसोई से बाहर निकल रही थी।